पशुपालक मित्र

पशुपालन को समर्पित त्रिमासिक पत्रिका

वर्ष : 2 अंक : 4 अक्टूबर, 2022 कुल पृष्ठ : 26 ISSN: 2583-0511(Online)

Visit us: www.pashupalakmitra.in

पशुपालक मित्र

पशुपालन को समर्पित त्रिमासिक पत्रिका ISSN: 2583-0511(Online)

संपादकीय पैनल

प्रधान संपादक

डॉ. सतीश कुमार पाठक
असिस्टेंट प्रोफेसर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

संपादक

पशु प्रजनन एवं मादा रोग विशेषज्ञ

1. डॉ.आशुतोष त्रिपाठी
   असिस्टेंट प्रोफेसर
   स.व.प. कृषि वि.वि., मेरठ
2. डॉ. विकास सचान
   असिस्टेंट प्रोफेसर
   दुवासू , मथुरा

पशु पोषण विशेषज्ञ

1. डॉ. दिनेश कुमार
   असिस्टेंट प्रोफेसर
   जे.एन.के.वि.वि., जबलपुर
2. डॉ. संदीप कुमार चौधरी
   असिस्टेंट प्रोफेसर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

पशुधन उत्पादन एवं प्रबन्धन विशेषज्ञ

1. डॉ. ममता
   असिस्टेंट प्रोफेसर
   दुवासू , मथुरा
2. डॉ. अजीत सिंह
   असिस्टेंट प्रोफेसर
   काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
3. डॉ. विपिन मौर्य
   असिस्टेंट प्रोफेसर
   काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

पशु औषधि विशेषज्ञ

1. डॉ. नीरज ठाकुर
   असिस्टेंट प्रोफेसर
   काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

वर्ष : 2 **अंक: 4** **अक्टूबर, 2022**

क्रमांक	लेख का शीर्षक	पृष्ठ संख्या
1.	**पशु पोषण में खनिज तत्वों की महत्ता व कमी से होने वाले रोग:** डॉ.राजेश नेहरा, डॉ.भानुप्रकास डागी एवं डॉ. विवेक सहारण	3-4
2.	**गांठदार त्वचा रोग या लंपी स्किन डिजीज : लक्षण ,उपचार एवं बचाव के उपाय :** डॉ.राजेश नेहरा, डॉ जागृति श्रीवास्तव, डॉ.अनिल कुमार लिंबा, डॉ. ममता कुमारी मीणा एवं डॉ. मुकेश कुमार गुर्जर	5-6
3.	**गांठदार त्वचा रोगः एक उभरता हुआ खतरा:** डॉ. भूमिका, डॉ. सोनम भट्ट, डॉ. विवेक कुमार सिंह, डॉ. अंजय एवं डॉ. पी. कौशिक	7-8
4.	**दुधारु पशुओ को संक्रमण काल (transition Period) में उर्जा की पूर्ति हेतु बाईपास फैट खिलाये एवं किटोसिस से बचाए :** डॉ. राजेश नेहरा, डॉ. बुधाराम, डॉ. सुनील मीना, डॉ. प्रवीण पिलानिया एवं डॉ. भानुप्रकाश	9-10
5.	**लेयर मुर्गी पालन एवं उनके चूजों का रखरखाव :** डा. संजीव रंजन	11-14
6.	**घर के पिछवाड़े में मुर्गी पालन:** डा. संजीव रंजन	15-18
7.	**एवियन इनफ्लुएंजा अर्थात बर्ड फ्लू के कारण एवं बचाव :** डॉ. संजय कुमार मिश्र एवं डॉ. पारुल	19-20
8.	**पशुओं में शारीरिक स्थिति स्कोरिंग:** डॉ. ममता, डॉ. रजनीश सिरोही, डॉ. दीप नारायण सिंह, डॉ. अजय कुमार एवं डॉ. यजुवेंद्र सिंह	21-22
9.	**ओसर पशुओं का रख-रखाव एवं प्रबन्धन:** डॉ. अजय कुमार, डॉ. ममता, डॉ. दीप नारायण सिंह, डॉ. रजनीश सिरोही एवं डॉ. यजुवेन्द्र सिंह	23-25

नोट: लेख में वर्णित सूचनाओं का दायित्व लेखक का होगा, संपादक का नही ।

Visit us: www.pashupalakmitra.in

संपर्क सूत्र

प्रधान संपादक
डॉ .सतीश कुमार पाठक,
असिस्टेंट प्रोफेसर,पशुशरीर रचना शास्त्र विभाग,
पशुचिकित्सा एवं पशुविज्ञान संकाय,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, बरकछा, मिर्जापुर-231001, उत्तर प्रदेश
ईमेल आई डी: pashupalakmitra1@gmail.com

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

पशु पोषण में खनिज तत्वों की महत्ता व कमी से होने वाले रोग

डॉ.राजेश नेहरा, भानुप्रकास डागी एवं विवेक सहारण

पशु पोषण विभाग, पशु चिकित्सा एवम पशु विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर

पशु के शरीर में लगभग 3 से 4% तक खनिज तत्व पाये जाते है । पशुपालन से अधिक लाभ लेने के लिए खनिज लवण पशुओं की खुराक में उतना ही आवश्यक है जितना पशुओं की खुराक में चारा और दाना। पशु आहार में इन सब खनिज तत्वों की मात्रा पर्याप्त होने के साथ-साथ इनका अनुपात भी सही होना चाहिए। पशु आहार में यदि इन खनिज तत्वों की कमी होगी तो पशुओ का उत्पादन कम होने के साथ साथ अनेक प्रकार की बीमारियां भी हो सकती है। मुख्य खनिज तत्वों का महत्व निम्नानुसार है-

कैल्सियम तथा फास्फोरस: पशु शरीर में लगभग 49% कैल्सियम तथा 27% फास्फोरस पाया जाता है । ये दोनों खनिज तत्व पशुओं की हड्डियों तथा दांतों के निर्माण व मजबूती प्रदान करने में सहायक है। हड्डियों में लगभग 36% कैल्सियम तथा 17% फास्फोरस पाया जाता है । वयस्क पशुओं में दूध उत्पादन में कैल्सियम का काफी योगदान रहता है। दुधारू पशुओं के ब्याने के तुरन्त बाद कैल्सियम की कमी के कारण "मिल्क फीवर" नामक रोग हो जाता है तथा दूध उत्पादन में कमी व पशु में सुस्ती आ जाती है। कैल्सियम व फास्फोरस की कमी से छोटे बछड़े-बछड़ियों में "रिकेटस" नामक रोग हो जाता है जिससे हड्डियों का विकास या तो पूर्ण रूप से रुक जाता है या उनका विकास विकृत रूप से होता है। बछड़ों में हड्डियां कमजोर हो जाती है व पैरों की हड्डियां मुड़ जाती है। टेढ़ी-मेंढ़ी हड्डियों के जोड़ बड़े हो जाते है तथा उनमें प्रायः दर्द रहता है। वयस्क पशुओं में इन तत्वों की कमी से 'अस्थि मृदुता' उत्पन्न हो सकती है, जिसके फलस्वरूप हड्डियों के टूटने का भय रहता है। बछड़ियों में प्रथम ब्यात की आयु लम्बी हो जाती है, आहार में फलीदार चारे होने से कैल्सियम पर्याप्त मात्रा में मिल जाता है। खनिज मिश्रण के द्वारा भी इसकी पूर्ति की जा सकती है। फास्फोरस की कमी से पशु को भूख कम लगती है तथा पशु 'पाइका' नामक बीमारी से ग्रसित हो जाते है जिसमें पशु मिट्टी , पत्थर, कपड़ा, लकड़ी आदि अखाद्य पदार्थो को खाने लगते है तथा दीवारों को भी चाटना शुरू कर देते है। गेहूं के चोकर व हड्डी के चूर्ण में फास्फोरस की पर्याप्त मात्रा पाई जाती है।

मैग्नीशियम: पशु शरीर में लगभग 0.8% मैग्नीशियम पाया जाता है । मुलायम तथा कच्ची घास चरने वाले पशुओ में मैग्नीशियम की कमी के कारण 'ग्रास टेटैनी' होने का डर रहता है। जिसमें पशु लड़खड़ाने लगता है तथा कमजोरी आ जाती है।

लोहा तथा तांबा: खून में हीमाग्लोबिन के निर्माण में लोहे व तांबे की आव श्यकता होती है। इन तत्वों की कमी से 'एनीमिया' नामक रोग हो जाता है , पशु कमजोर तथा पीला पड़ जाता है , जिसका प्रतिकूल असर उसके दुग्ध उत्पादन पर पड़ता है। तांबे की कमी से पशु गर्मी में नहीं आते तथा उनकी प्रजनन क्षमता में कमी आ जाती है। फलीदार चारे में लो हे व तांबे की प्रचू र मात्रा पाई जाती है।

सोडियम व क्लोराइड या साधारण नमक: खुराक में नमक की कमी होने से पशु को भूख कम लगती है व पशु कमजोर हो जाता है। शरीर भार में कमी, खुरदरी रोए की परत, आंखों की

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

चमक में कमी , कोर्निया का खुरदरापन , दुधारू पशुओं में दूध उत्पादन में कमी , हृदय की असामान्य गति, पानी की कमी के कारण शुष्कता, एक दूसरे पशु की खाल चाटना, धूल चाटना, बार-बार व अधिक मात्रा में मूत्र करना व मूत्र पीना, नमक की कमी के प्रमुख लक्षण है।

पौटेशियम: यह अंतः कोशिकीय द्रव का मुख्य घटक है । माँस पेशियों के संकुचन व तंत्रिका आवेशों के संचार के लिए आवश्यक हैं। इसके अतिरिक्त इलेक्ट्रोलाइट संतुलन के लिए आवश्यक है ।

आयोडीन: समुद्री शैवाल में आयोडीन की प्रचुर मात्रा पाई जाती है। यह थायरोक्सिन हॉर्मोन के संश्लेषण के लिए जरुरी होता है जो कोशिकीय श्वसन के लिए आवश्यक है। इसकी कमी से घेंघा नामक रोग हो जाता है। गाभिन पशुओं में आयोडिन की कमी से गर्भपात हो सकता है , या मरे हुए, कमजोर व बिना रोएं के बच्चे पैदा होते हैं। त्वचा कठोर व खुरदरी हो जाती है। ऐसे बच्चों की मृत्युदर अधिक होती है।

पशुओ को ये खनिज तत्व हरे चारे व बाटे में मिलते है। अतः इनको साल भर हरा चारा खिलाना चाहिए साथ ही सन्तुलित पशु आहार में 2 प्रतिशत की दर से खनिज लवण व 1 प्रतिशत साधारण नमक मिलाना चाहिए ।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

गांठदार त्वचा रोग या लंपी स्किन डिजीज : लक्षण ,उपचार एवं बचाव के उपाय

डॉ. राजेश नेहरा, डॉ. जागृति श्रीवास्तव, डॉ. अनिल कुमार लिंबा, डॉ. ममता कुमारी मीणा एवं डॉ. मुकेश कुमार गुर्जर

पशु पोषण विभाग, पशु चिकित्सा एवम पशु विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर

कुछ दिनों से हमारे देश के विभिन्न भागों में एक संक्रामक रोग, जिसे लंपी स्किन डिजीज कहा जाता है, तेजी से गायों एवं भैंसों में फैल रहा है ।यह एक विषाणु जनित संक्रामक रोग है जिसमें पशु के पूरे शरीर पर गांठे हो जाती हैं । इस विषाणु का संबंध भेड़ एवं बकरी माता रोग के विषाणु से है तथा यह रक्त चूसने वाले परजीवी जैसे मच्छर तथा मक्खियों के माध्यम से एक पशु से दूसरे पशु में फैलता है। साथ ही यह पशुओं के चारे ,दाने व शरीर पर अगर घाव हैं तो इसके माध्यम से भी फैल सकता है । हालांकि इस रोग में मृत्यु दर कम (लगभग 10%) होती है, लेकिन दुग्ध उत्पादन बहुत कम हो जाता है।

लक्षण:-

इस रोग के मुख्य लक्षण निम्न प्रकार हैं :-

1. पशु को तेज बुखार आता है जो लगभग 1 सप्ताह तक रह सकता है ।
2. पशु के शरीर पर त्वचा के नीचे स्थित लक्षिका ग्रंथियों में सूजन आ जाती है ।
3. पशु के शरीर पर मोटी मोटी गांठे (लगभग 2 से 4 सेंटीमीटर) हो जाती हैं ।
4. इन गांठों के फटने पर तरल पदार्थ निकलता है ।
5. बाद में गांठे घाव में बदल जाती हैं ।
6. कभी -कभी पशु की आंखों में भी गांठे बन जाती हैं जिससे पशु अंधे हो जाते हैं ।
7. मादा पशुओं में गर्भपात हो जाता है ।
8. दुधारू पशुओं का दुग्ध उत्पादन काफी कम हो जाता है ।
9. घाव में जीवाणु से संक्रमण होने का खतरा रहता है ।
10. इस रोग का संक्रमण काल लगभग 4 से 14 दिनों तक होता है ।

उपचार :-

1. यह एक विषाणु जनित संक्रामक रोग है इसका कोई औषधीय उपचार उपलब्ध नहीं है ।
2. जीवाणु द्वारा फैलने वाले संक्रमण को रोकने के लिए एंटीबायोटिक एवं बुखार , दर्द तथा सूजन को रोकने के लिए ज्वररोधी एवं सूजन रोकने वाली सूजनरोधी दवाइयां दी जाती है ।
3. लगभग 3 सप्ताह में प्रभावित पशु ठीक हो जाता है,लेकिन गांठों के फूटने पर बने घाव पर लगातार एंटीबायोटिक क्रीम लगानी चाहिए ताकि द्वितीय संक्रमण नहीं फैले ।
4. यह एक विषाणु जनित रोग है इसलिए रोग से बचाव ही इसका इलाज है ।
5. ठीक होने पर पशुओं में रोग प्रतिरोधक क्षमता विकसित हो जाती है ।
6. बकरी एवं भेड़ माता रोग की वैक्सीन इस रोग को रोकने में कुछ हद तक उपयोगी है ।

बचाव के उपाय :-

1. यह रोग एक पशु से दूसरे पशु में मच्छरों एवं मक्खियों के काटने के कारण फैलता है इसलिए रोग से प्रभावित पशु को अन्य पशुओं से अलग रखना चाहिए ।
2. पशु आवास में खून चूसने वाले परजीवी मक्खी मच्छर से बचाव के सभी उपाय करने चाहिए ।
3. पशु का तुरंत पशु चिकित्सक से उपचार करवाना चाहिए ।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

4. नए खरीदे गए पशु को पशु बाड़े में शामिल करने से पहले लगभग 15 दिनों तक निगरानी में रखना चाहिए ।
5. आवास की साफ-सफाई अच्छी तरह से होनी चाहिए एवं पानी का भराव आस पास नहीं हो जिससे मच्छर एवं मक्खियां नहीं पैदा हो, इसका उचित प्रबंधन करना चाहिए ।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

गांठदार त्वचा रोगः एक उभरता हुआ खतरा

डॉ. भूमिका, डॉ. सोनम भट्ट[1], डॉ. विवेक कुमार सिंह[2], डॉ. अंजय एवं डॉ. पी. कौशिक

सहायक प्रध्यापक, पशुलोक स्वास्थ्य एवं महामारी विज्ञान विभाग,
बिहार पशुचिकित्सा महाविद्यालय, बिहार पशुविज्ञान विश्वविद्यालय, पटना

1. सहायक प्रध्यापक, पशु औषधि विज्ञान विभाग,
2. सहायक प्रध्यापक, पशु नैदानिक परिसर विभाग,

गांठ दार त्वचा (लंपी स्किन) रोग एक विषाणु जनित रोग है, जो मवेशियों को प्रभावित करता है। यह रक्त पोषक कीड़ो जैसे मक्खियों और मच्छरों की कुछ प्रजातियों द्वारा होता है। यह बुखार का कारण बनता है। त्वचा पर गांठ और मृत्यु भी हो सकती है, खासकर उन जानवरों में जो पहले विषाणु के संपर्क में नहीं आये है । वर्तमान समय में भारत के गुजरात एवं राजस्थान राज्यों में लगभग दस हजार गायों की मृत्यु हो चुकी है, तथा लगभग दो लाख गायों के संक्रमित होने का अनुमान है। गुजरात एवं राजस्थान के आलावा यह बीमारी मध्यप्रदेश , पंजाब, हिमाचलप्रदेश में भी रिपोर्ट की गयी है तथा जल्द ही इसके दूसरे राज्यों में भी फैलने के आसारहै। बताया जा रहा है, कि यह बीमारी हमारे पड़ोसी देश पाकिस्तान के रास्ते अप्रैल महीने में देश में आई थी। हालांकि यह बीमारी अफ्रीकन मूल की बताई जा रही है ।वहां इसका पहला मामला सन् 1929 में सामने आया था।

बीमारी का कारण क्या हैं ?

गांठदार त्वचा बीमारी एक विषाणु से फैलने वाला रोग है । यह बीमारी कैप्री पांक्स नामक विषाणु के कारण होती है । इस विषाणु की समानता बकरियों एवं भेड़ों में चेचक करने वाले विषाणु से बताई जा रही है।

कौन से जानवर गांठदार त्वचा रोग से प्रभावित होते है ?

यह रोग मुख्यतः गायों एवं भैसों में पाया जाता है । दूसरे पशुधन इस रोग से प्रभावित नहीं होते हैं । गायों में भैसों के मुकाबले मृत्यु दर ज्यादा है।

क्या यह रोग मनुष्यों में भी फैल सकता हैं ?

मनुष्यों में यह बीमारी फैलने का खतरा न के बराबर हैं, हालांकि पशुओं को छूने के बाद सभी लोगो को अच्छी तरह से हाथ धोना चाहिऐं।

क्या गांठ दार त्वचा रोग मौसमी हैं ?

बीमारी का प्रकोप मौसमी होता है। यह मुख्यतः बरसात के दिनों में फैलता है । परंतु बीमारी का प्रकोप साल के किसी भी समय में हो सकता है । क्योकि मच्छर, मक्खी और खून चूसने वाले कीट हर जगह मौजूद होते हैं ।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

बीमारी के लक्षण क्या होते हैं ?

गांठदार त्वचा बीमारी का सबसे ज्यादा असर दुधारू पशुओं में देखने को मिलता है । यह बीमारी होने पर पशुओं के शरीर में गांठ होने लगती है । उन्हें तेज बुखार आता है, साथ ही सिर और गर्दन में तेज दर्द होता है । बीमार पशुओं के दूध देने की क्षमता भी घट जाती है । पशुओं के मुंह में गांठ बन जाने से वह खाना नहीं खा पाते अतः उनका वजन कम होने लगता है । ज्यादा मात्रा में लार का निकलना एवं नाक बहना इसके दूसरे लक्षण होते है । गाभिन पशुओं में गर्भपात की समस्या देखी गयी है । कुछ पशुओं की मृत्यु भी हो जाती हैं ।

पशुओं में बीमारी का इलाज क्या हैं ?

इस बीमारी की कोई इलाज नहीं है । सामान्यतः हम प्रतिजैविकों का,सूजन कम करने वाली दवाईया, विटामिन की दवाईया दे सकते है । इन सब दवाइयों का उपयोग करके हम दुसरे जीवाणु के संक्रमण, बुखार और सूजन को कम करने के लिए कर सकते है और साथ ही पशुओं की भूख को बढ़ा सकते हैं।

पशुओं को बीमारी से बचाने के लिए क्या करें ?

विश्व पशु स्वास्थ्य संगठन के अनुसार इस बीमारी का शीघ्र निदान करना एवं उसके बाद बड़े स्तर पर टीकाकरण का क्रार्यक्रम किया जाना चाहिये । पशुचिकित्सों के अनुसार यह बीमारी मच्छरों एवं मक्खियों जैसे खून चूसने वाले कीड़ों से फैलता है । दूषित चारे एवं पानी के कारण पशुओं को अपने चपेट में ले लेता है । अगर किसी पशु में इस बीमारी के लक्षण दिखते है तो अन्य पशुओ से अलग कर दें । किसी अन्य पशुओं का जूठा पानी या चारा न खिलाये साथ ही पशुओं को रखने वाले स्थान पर साफ-सफाई का ध्यान रखें । पशुगृह में कीटनाशक एवं निस्संक्रामक रसायन का उपयोग करे जिससे रोग फैलाने वाले वाहको को कम किया जा सके । स्वस्थ पशुओं में टीकाकरण करना चाहिऐ, जिससे उनमें प्रतिरोधक क्षमता का विकास हो । इन सब के अलावा मरे हुये पशुओं का सही तरह से निस्तारण करना चाहिये, तथा उसके आसपास की जगह को स्वच्छ करना चाहिऐं।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

दुधारु पशुओ को संक्रमण काल (transition Period) में उर्जा की पूर्ति हेतु बाईपास फैट खिलाये एवं किटोसिस से बचाए

डॉ. राजेश नेहरा, डॉ. बुधाराम, डॉ. सुनील मीना, डॉ. प्रवीण पिलानिया एवं डॉ. भानुप्रकाश

पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान महाविद्यालय, राजुवास, बीकानेर

श्रेष्ठ नस्ल के पशु को संतुलित आहार दिया जाये तो अधिकतम उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है । पशुपालन के कुल खर्च का लगभग 70 % भाग पशु आहार पर खर्च किया जाता है । हमारे देश में चारे व दाने की काफी कमी है इस कारण पशुओ को संतुलित आहार नहीं मिल पाता है , एवं पशु के शरीर में उर्जा व प्रोटीन की कमी हो जाती है । पशु के ब्याने के तीन सप्ताह पहले एवं तीन सप्ताह बाद के समय को संक्रमण काल कहा जाता है । जिसमे पशुओ में उर्जा की कमी रहने के कारण उनका उत्पादन प्रभावित होता है, एवं पशुओ में उपापचय रोग किटोसिस हो जाता है

बाईपास फैट क्या है :- बाईपास फैट अधिक दूध उत्पादन देने वाले पशुओं को गर्भावस्था के अंतिम दिनों और शुरुवाती दुग्धावस्था के दौरान देने पर सर्वश्रेष्ठ परिणाम प्राप्त होते है। पशुओं को पशु आहार में बाईपास फैट देने पर बाईपास फैट रूमन में अपघटित नहीं होती है , बल्कि एबोमेजम की अम्लीय पी.एच. पर इसका पाचन होता हैं, अर्थात ये रूमेन को बाईपास कर जाती हैं। बाईपास फैट का मेल्टिंग सूचकांक ज्यादा होता हैं , इस कारण से भी ये रूमन में अपघटित नहीं होती हैं। कई खाद्य पदार्थो में प्राकृतिक रूप् में कुछ मात्रा बाईपास फैट की पायी जाती हैं जैसे- बिनौला, सीड, सोयाबिन इत्यादि।

बाईपास फैट (वसा) तैयार बनाने की विधियां-

1. वसा का हाइड्रोजनीकरण करके

2. लंबी श्रृंखला वाले वसीय अम्लों के “कैल्सियम साबुनीकृत लवण“ बनाकर

3. तेल वाले बीजों का फार्मेल्डिहाइड उपचार करके

4. फ्यूजन विधि

बाईपास फैट खिलाने के फायदेः-

1. बाईपास फैट पशु को पोजिटिव ऊर्जा बेलेन्स में रखती हैं और पशु में नेगेटिव ऊर्जा बेलेन्स वाले रोग अथवा उपापचयी रोग जैसे कीटासिस और मिल्क ज्वर इत्यादि नहीं होते है।

2. पशु की शारीरिक दशा एवं स्वास्थ्य में सुधार होता हैं।

3. पशु की प्रजनन क्षमता में वृद्धि होती हैं।

4. पशुओं का दूध उत्पादन बढ़ता हैं।

5. दूध में वसा की मात्रा बढ़ती हैं।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

6. बछड़े-बछड़ियों का अच्छा शारीरिक विकास होता हैं।

पशु को दी जाने वाली बाईपास फैट की मात्राः- बाजार में अलग अलग ब्रांड के बाईपास फैट उपलब्ध हैं जैसे- केमिन , मेगालेक और डेयरीलेक इत्यादि। बाईपास फैट की 100 ग्राम से 400 ग्राम मात्रा तक प्रति गाय, प्रतिदिन की दर से खिलाया जा सकता हैं। इसकी मात्रा का निर्धारण इसके ब्रांड और गाय की दूध उत्पादन क्षमता के हिसाब से करते हैं। पशु को संक्रमण काल में बाईपास फैट खिलाकर निश्चित तौर पर पशुपालक अधिक दूध उत्पादन और बछड़े-बछड़ियों में अच्छी शारीरिक विकास दर प्राप्त कर लाभ कमा सकते हैं।

पशुपालक मित्र 2(4): 11-14 ; अक्टूबर, 2022
ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

लेयर मुर्गी पालन एवं उनके चूजों का रखरखाव

डा. संजीव रंजन

विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान)
कृषि विज्ञान केंद्र, हरनौत (नालन्दा)

कुक्कुट पालन अल्पावधि में उच्च लाभ प्रदान कराने वाला व्यवसाय है। लघु स्तर पर 'घर के पिछवाड़े' में मुर्गी पालने के दौरान कोई विशेष पूँजी की आवश्यकता नहीं होती है। मुर्गियां घर में बचे हुए गेहूं, चावल व अन्य आनाज के टुकड़े व रसोई का बचा अनाज साथ ही साथ इधर-उधर घूमकर कीड़े-मकोडे आदि से अपना पेट भर लेती है। इनकी देखरेख घर की महिलायें एवं बच्चों द्वारा हो जाती है। इस विधि में देसी मुर्गिया ही पाली जाती हैं जिनमें उत्पादन प्रायः कम होता है।

सामान्यतया मध्यम स्तर पर 'अर्ध सघन' विधि द्वारा मुर्गी पालन में 50-100 तक मुर्गिया पाली जा सकती है तथा इनकी देखरेख हेतु अलग से स्थान की आवश्यकता होती है। अतः इस विधि में आवास एवं आहार हेतु थोड़ी पूंजी की आवश्यकता होती है। उच्च स्तर के अन्तर्गत 'सघन प्रणाली' द्वारा मुर्गियों को तीन विभिन्न श्रेणियों में पाला जा सकता है जिनमें पक्षियो की संख्या 500-1000 से शुरु होकर अत्यन्त उच्च स्तर तक किया जा सकता है जोकि पूर्णतया व्यावसायिक रूप से प्रबन्धित होता है।

सामान्यतया मुर्गी पालकों को मुर्गी पालन के दौरान आवास निर्माण, चूजा प्राप्ति, आहार, फार्म प्रबन्ध पर मजदूर व तकनीकी कार्यकर्ता, बिजली व पानी तथा उपकरणों पर खर्च का पूरा ब्योरा रखने के साथ-साथ अण्डा उत्पादन से प्राप्त धन, खाद, व पुराने स्टाक की बिक्री से प्राप्त धन का पूरा ब्योरा रखना चाहिए। अण्डे वाली मुर्गियों में अपनी पठोर अवस्था तक आने पर 7.5 कि0ग्राम तथा उसके बाद वर्ष भर के उत्पादन के लिये 40-42 कि0ग्रा0 प्रति मुर्गी की दर से आहार की जरूरत पड़ती है तथा एक मजदूर 1000 मुर्गियों की देखभाल अच्छी तरह कर सकता है। इन अवयवों पर होने वाले खर्च को वर्तमान समयानुसार आका जा सकता है। इसके अलावा बिजली,पानी तथा उपकरण पर वर्तमान समय में लगभग 20-22 रू0 प्रति मुर्गी का खर्च आ सकता है। वर्ष के अन्त में यदि फार्म प्रबन्ध नियमानुसार किया गया हो तो, प्रति वर्ष 8-10 रू0 प्रति मुर्गी लाभ प्राप्त किया जा सकता है जो कि किसानों द्वारा किये गये आवर्ती तथा अनावर्ती खर्चों को ध्यान में रख कर निकाला गया है।

मुर्गियों के पालन में अन्य व्यवसायों की अपेक्षा कहीं अधिक ध्यान देने की आवश्यकता पड़ती है। प्रारम्भ में कुक्कुट पालन थोड़ी मुर्गियों से शुरू करके एक सहयोगी धन्धे के रूप में अपनाना चाहिए। अनुभव प्राप्त करने के उपरान्त अपनी क्षमता के अनुसार मुर्गी पालन को एक बड़े उद्योग का रूप दे सकते हैं।

कुक्कुट आवास हेतु स्थान के चुनाव के समय कई ध्यान रखने योग्य बाते हैं जो निम्न है-

- भूमि में पानी का जमाव न हो।

- कुक्कुट गृह का स्थान एक शांत वातावरण में होना चाहिए।
- बाजार तक उत्पादनों के परिवहन हेतु तथा व्यवसाय की सामग्री के परिवहन की अच्छी सुविधाये उपलब्ध होनी चाहिए।
- विद्युत तथा जल आपूर्ति के पर्याप्त साधन उपलब्ध होने चाहिए।
- पशु चिकित्सक की सुविधा उपलव्ध होना आवश्यक है। कुक्कुट विषेषज्ञों की सहायता अगर संभव हो तो प्राप्त करना अच्छा रहेगा।
- कुक्कुट बीमा, दुर्घटना के समय कुक्कुट व्यवसायी की सहायता प्रदान करती है। अतः मुर्गी बीमा की सुविधा इस व्यवसाय के लिए अत्यधिक लाभप्रद है। साथ साथ राष्ट्रीयकृत बैंक या ऋण दात्री संस्थान का समीपस्थ होना लाभप्रद होगा।
- योग्य विशेषज्ञ द्वारा बीमारी से मरे पक्षियों के रोग का पता लगाना तथा उपयुक्त रीति से निष्कासित करने का प्रबन्ध करवाना चाहिए।

सामान्यतया मुर्गियों का पालन तीन अवस्थाओं में किया जाता है, जो कि निम्न प्रकार हैंः-

- ब्रूड़िंग अवस्था
- पठोर अवस्था
- वयस्क अवस्था

ब्रूड़िंग अवस्थाः- इन्क्यूबेटर से चूजा प्राप्त होने के बाद उसे पालने की क्रिया को 'ब्रूड़िंग' तथा 'रियरिग' कहते है। इस अवस्था का समय एक दिन से लेकर 5 या 8 सप्ताह तक रहता है। समय की अवधि मौसम और जाति के अनुसार निर्धारित की जाती है। चूजे प्राप्त करने से पहले ही ब्रूडर गृह तैयार कर लेना चाहिए। इस दौरान जिन विशेष बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए वह निम्न प्रकार हैः-

- चूजा गृहों की उचित साफ-सफाई तथा जीवाणु रहित करना।
- मकान में वायु का पूरा प्रबन्ध हो तथा वैन्टीलेशन ठीक हो।
- दाने तथा पानी के बर्तनों का उचित मात्रा में व्यवस्थित ढंग में लगाना।
- शुरू के 1-2 दिनों में अखबार या कोरूगेटिड पेपर बिछा देना।
- कमरे के फर्ष पर चारों कोनों को गोलाकार करना जिससे चूजे एक जगह इकट्ठे न हो जायें।
- चिक गार्ड का प्रयोग करना।
- मौसम व चूजों की उम्र के अनुरूप ब्रूडर कमरों तथा होवर के नीचे उचित तापक्रम को बनाये रखना। नर व मादा की पहचान होते ही उनका अलग-अलग पालन करना उचित रहेगा।

तापक्रम के मापदण्ड इस प्रकार से हैः-

पहले सप्ताह में ब्रूडर के नीचे का तापक्रम 95 डिग्री फा0 रखा जाता है जोकि 5 डिग्री फा0 प्रति सप्ताह के हिसाब से घटाकर 70 डिग्री फा0 6 सप्ताह की अवस्था तक लाया जाता है। उसके पष्चात यदि जरूरत पड़े तो 2 सप्ताह और इसी तापक्रम पर ब्रूड़िंग की जा सकती है। अत्यधिक गर्मियों में कोल्ड ब्रूड़िंग की जा सकती है , क्योंकि वातावरण का ताप इतना अधिक होता है तथा किसी

अन्य विधि से ताप देने की जरूरत ही नहीं पड़ती। एक दिन की अवस्था से 8 सप्ताह तक चूजों को फर्श पर आधा वर्ग फुट जगह मिलनी चाहिए।

चूजों को ब्रूड़िंग के दौरान हावर के नीचे दाना ,पानी तथा उचित तापमान मिल सके तथा चूजे दिशा भ्रमित न हो जाये इस के लिए चिक गार्ड का प्रयोग किया जाता है। प्रथम के कुछ दिनों के लिए ब्रूड़र/हावर के चारों ओर टाट की बोरी/गत्ता/एसबेस्टस या धातु चादरों के चिक गार्ड का प्रयोग किया जाता है। चूजे जब आहार , पानी के बर्तनों या उष्मा प्राप्त करने के लिए घूमना प्रारम्भ कर देते है तो चिक गार्ड का क्षेत्र बढ़ा देना चाहिए। चिक गार्ड आमतौर पर हावर के किनारों से 0.9 से 1.2 मीटर दूर रखना चाहिए। प्रतिदिन यह दूरी बढ़ाकर अधिकतम 1.5 मीटर कर दी जाती है। आमतौर पर गर्मियों में 7-10 दिन तथा सर्दियों में 14-15 दिन बाद इसकी आवश्यकता नहीं पड़ती।

दाना, पानी तथा रहने के लिए स्थान की व्यवस्थाः-

शुरू के 1-2 दिनों तक चूजों को महीन पिसी मक्का तथा विटामिन मिश्रण मिलाकर देना चाहिए, एक दिन से 8 सप्ताह तक फर्श पर चूजों को 1/2 वर्ग फूट जगह मिलनी चाहिए। दाने के बर्तनों में चूजों को शुरू के 2 सप्ताह तक प्रति चूजे 1 इंच, 2 से 6 सप्ताह तक 2 इंच, तथा 6 सप्ताह के बाद 3 इंच, के हिसाब से स्थान दिया जाना चाहिए।

पानी के लिए प्रति मुर्गी को 2 सप्ताह तक 1/4 इंच , तथा 3 से 8 सप्ताह तक 1/2 इंच , स्थान मिलना चाहिए। चूजों को रोज ही ताजा तथा साफ पानी , बर्तन साफ करके दिया जाना चाहिए। एक बात और जो अत्यन्त आवश्यक है, वह यह कि दाने तथा पानी के बर्तन इस तरह से लगाने चाहिए कि चूजे हावर के अन्दर तथा परिधि के बाहर दोनों ही जगह दाना, पानी प्राप्त कर सकें। चूजों को यदि 24 घण्टे हल्की रो शनी दी जाये तो उन्हें दाने-पानी के बर्तन पहचानने में मदद मिलती है। इसके अलावा रोशनी मिलने से चूजे किन्हीं बाहरी कारणों से घबराकर एक दूसरे के ऊपर इकट्ठे होकर मरने से बच जाते है तथा हल्की रोशनी चूजों की शारीरिक वृद्धि में भी सहायक होती हैं।

पठोर अवस्थाः आठ सप्ताह की उम्र पूरी कर लेने के बाद चूजों के पर्याप्त मात्रा में पर निकल आते है तथा वातावरण के प्रतिकूल प्रभाव से उनकी रक्षा करना उतना कठिन नहीं होता। यह अवस्था 9 सप्ताह से शुरू होकर 16/20 सप्ताह तक की होती है। इस दौरान प्रति मुर्गी को फर्श पर 1.75 से 2.00 वर्ग फुट जगह मिलनी चाहिए। दाने पानी की उचित मात्रा तथा इनके बर्तनो में मिलने वाली जगह का भी उचित प्रबन्ध कर लेना चाहिए तथा इन बर्तनों को फैला कर रखना उचित रहेगा , जिससे पैकिंग की वजह से कमजोर चूजों को परेशानी न हो। सामान्यतः ग्रोवर्स को प्रकाश की जरूरत नहीं पड़ती परन्तु यदि चोंच मारने का भय हो तो छोटा बल्ब लगाना उचित होता है। आठ सप्ताह की उम्र से ग्रोवर मैस देना शुरू कर देना चाहिए। दाना खाने के लिए प्रति मुर्गी 2.5 इंच से 3.0 इंच स्थान तथा पानी के लिए 3/4 इंच से लेकर 1 इंच का स्थान मिलना चाहिए। दाने की बरबादी को कम करने के लिए उचित उपाय करने चाहिए। इसके लिए प्रति पठोर मुर्गी को कुल 100 ग्राम दाना दिन में दो बार में दिया जा सकता है तथा ग्रिल वाले दाने के बर्तन का इस्तेमाल किया जाता हैं।

चोंच काटना (डिबीकिंग) : मुर्गिया दाना ठीक से खा सकें और दाने की बरबादी भी कम की जा सकें; इसके अलावा मुर्गियों में आपस में लड़ने के कारण चोंच मारने से शारीरिक क्षति भी न हो

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

सकें; इसके लिए चूजों की चोंच काटी जाती है। सामान्यतः चूजों की चोंच 6-8 सप्ताह की उम्र पर काटी जाती है। यदि जरूरत महसूस हो तो पठोर मुर्गियों को वयस्क अवस्था में आने से कुछ सप्ताह पूर्व भी चोंच काटी जा सकती है। वयस्क मुर्गियों की 14-16 सप्ताह के मध्य चोंच काट देनी चाहिए। चोंच काटने के तुरन्त बाद चोंच को पोटे शियम परमैंगनेट के घोल में डुबा कर मुर्गियों को कमरों में छोड़ देना चाहिए। चोंच काटने का कार्य अनुभव प्राप्त व्यकित को ही देना चाहिए।

वयस्क अवस्था में मुर्गियों का पालन व देखभालः पठोर मुर्गियों को अण्डे वाले मुर्गी घरों 16-18 सप्ताह के मध्य में पहुचा देना चाहिए। बाहरी कीड़ों को मारने के लिए पठोर मुर्गियों को अण्डे वाले मुर्गी घरों में डालने के कुछ दिन पूर्व उनकी डस्टिंग की जाती है तथा फर्श पर पाली गई पठोर मुर्गियों को कीड़े मारने वाली दवाई भी पिलाई जाती है। कृमिना शक दवाओं के उपयोग से मुर्गियों पर पड़ने वाले कुप्रभाव को दूर करने के लिए उन्हें 3-4 दिनों तक विटामिन तथा मिनरल दिये जाने चाहिए गहरी बिछाली पद्धति में मुर्गियों को रहने के लिए फर्श पर 2 से 2.5 वर्गफुट , खाने के लिए 3-4 इंच तथा पानी पीने के लिए 2 इंच जगह देना आवश्यक होता है।

आहार एवं प्रकाश व्यवस्थाः ग्रोवर मैस का लेयर मैस में परिवर्तन धीरे-धीरे किया जाना चाहिए। 18 सप्ताह की उम्र के बाद प्रति 200 पक्षियों के पीछे एक डिब्बे में ग्रिट रखना भी उचित रहेगा। मुर्गियों को स्थानीय उपलब्धि के अनुसार संतुलित एवं पौष्टिक आहार पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराना आवश्यक है जिसमें 16-18 प्रतिशत प्रोटीन, व 2800-2900 कि0 कैलौरी प्रति कि0 ग्रा0 ऊर्जा, 4 प्रतिशत कैलसीयम, 0.8-0.9 प्रतिशत फास्फोरस तथा 0.5 प्रतिशत नमक होना चाहिए। वयस्क मुर्गी नस्ल, आयु एवं मौसम के अनुसार 100-120 ग्राम आहार खाती है। मुर्गिया प्रकाश के प्रति काफी संवेदनशील होती है। इन्हें 18 सप्ताह की उम्र पर 14 घंटे प्रकाश की आवश्यकता होती हैं। इसके पश्चात प्रति सप्ताह 30 मिनट प्रकाश बढ़ाते रहना चाहिए। जब मुर्गियों के लिए दिन का प्रकाश सम्मिलित करते हुए 17 घंटे प्रकाश अवधि हो जाये तो इससे अधिक बढ़ाने की आवश्यकता नहीं होती। अण्डे वाले मुर्गी घरो में दड़बों का प्रयोग उचित रहेगा , एक दड़बा 5-6 मुर्गियों के लिए काफी होता है। सामुदायिक दड़बे भी इस्तेमाल किये जा सकते है। समय समय पर पक्षियों की छटनी करना भी उचित होता हैं। पठोरों को लेयर कक्ष में स्थानान्तरण से पूर्व कमजोर , बीमार, नाकारा, कुड़क व अनुत्पादक मुर्गियों की छटनी कर देनी चाहिए। ये कार्य भविष्य में भी समय-समय पर करते रहना चाहिए।

मुर्गियों का टीकाकरणः अण्डे वाली मुर्गियों में 6-8 सप्ताह की अवस्था तक जो टीकाकरण सामान्यतः किये जाते हैं वे हैं- मेरेक्स , आर0डी0एफ0 स्ट्रैन, आई0बी0डी0 इण्टरमीडिएट स्ट्रैन और फाउल पाक्स वैक्सीन द्वारा टीकाकरण। पठोर व वयस्क अवस्थाओं में जो टीकाकरण किये जाते हैं उनमें विषेश हैं- आर0डी0 आर0टू0बी तथा ई0डी0एस0-76। इसके अतिरिक्त अण्डे वाली प्रजातियों के ब्रीडर्स का टीकाकरण आई0बी0डी0 किल्ड वैक्सीन द्वारा किया जाता है। योग्य विशेषज्ञ द्वारा बीमारी से मरे पक्षियों के रोग का पता लगाना तथा उपयुक्त रीति से निष्कासित करने का प्रबन्ध करवाना चाहिए।

पशुपालक मित्र 2(4): 15-18 ; अक्टूबर, 2022
ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

घर के पिछवाड़े में मुर्गी पालन

डा. संजीव रंजन

विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान)
कृषि विज्ञान केंद्र, हरनौत (नालन्दा)

विगत तीन द शकों में मुर्गीपालन में बहुर्मुखी विकास हुआ है और मुर्गीपालन ने कुक्कुट उद्योग का रूप ले लिया है। अभी भी मुर्गीपालन के क्षेत्र में बहुत कुछ करना बाकी रह गया है क्योंकि हम भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद द्वारा निर्धारित प्रति व्यक्ति 180 अण्डे तथा 11कि0ग्रा0 मांस की उपलब्धता से काफी दूर हैं। वर्तमान प्रति व्यक्ति अण्डे की उपलब्धता मात्र 50 से 55 अण्डे है जबकि मांस की उपलब्धता 2.2 कि0ग्रा0 है। निर्धारित मानकों की पूर्ति के लिये अण्डे में लगभग 4 गुणा की वृद्धि वांछित है और मांस के लिये 5 गुणा वृद्धि की आवश्यकता होगी। लेकिन वृद्धि की यह दर अकेले कुक्कुट उद्योग से शायद सम्भव नहीं है क्योंकि कुक्कुट आहार में प्रयोग में लायी जाने वाली अधिकां श अवयव मनुष्य के खानें में काम आता है। जनसंख्या वृद्धि के साथ इन अवयवों की आपूर्ति कुक्कुट आहार के लिये होना शायद सम्भव नहीं होगा। यही कारण है कि हाल के कुछ वर्षों में कुक्कुट उत्पादन के तेजी से बढ़ते ग्राफ में ठहराव सा आता नजर आ रहा है। गरीब भारतीय ग्रामीणों को मांस और अंडे उपलब्ध कराने की समस्या सामने है। इस समस्या के निदान के लिये मुर्गी के छोटे-छोटे समूहों के लिये ऐसी उपयुक्त पद्धति का विकास करना होगा जिस में न्यूनतम खर्च पर अंडे और मांस का उत्पादन सम्भव हो सके। कम कीमत पर मांस और अंडे का उत्पादन का एकमात्र साधन परम्परागत घर के पिछवाड़े में देशी मुर्गीपालन पद्धति है। मुर्गी पालन की यह पद्धति सबसे सरल है जिसे छोटे और लघु कृषक, भूमिहीन मजदूर तथा महिलायें या बच्चे अपना सकते हैं। इस पद्धति में प्रायः 5 से 20 मुर्गियों का छोटा सा समूह एक परिवार के द्वारा पाला जाता है जो घर के पिछवाड़े तथा गली कूचों में अन्न के गिरे दाने, झाड़ फूसों के बीज, कीड़े मकोड़े, घास की कोमल पत्तिया तथा घर की जूठन इत्यादि खाकर अपना पेट भरता है। केवल प्रतिकूल वातावरण में निम्न कोटि का थोड़ा सा अनाज खिलाने की जरुरत पड़ती है। इसके रात्रि विश्राम तथा शिकारियों से बचाव के लिये घर के टूटे फूटे भाग काम में आते हैं या बांस की पुरानी टोकरी इत्यादि काम में लाये जाते हैं। इस प्रकार उनके रख-रखाव और खाने-पीने पर कोई खर्च नहीं करना पड़ता है।

देशी मुर्गी पालन मोटे तौर पर देखने में अस्तित्वहीन दिखाई पड़ता है लेकिन इसका पूर्ण विश्लेषण करनें पर इसके अनेकों लाभ नजर आते हैं -

(1) ग्रामीण क्षेत्रों में मुर्गी के अण्डे और मांस की उपलब्धता सुनिष्चित करने का यह एक सशक्त और आसान तरीका है।

(2) इसके लिये किसी वि शेष आवास या रख-रखाव की आवश्यकता नहीं होती है अतः भूमिहीन अशिक्षित किसान भी इसे अपना सकते हैं।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

(3) केवल एक बार शुरुआत में मुर्गे और मुर्गियों की खरीद में नाममात्र लागत की जरुरत पड़ती है और बाद का क्रम अपनें आप चलते रहता है।
(4) इस पद्धति से उत्पन्न अण्डे और मांस के उत्पादन में लागत नहीं के बराबर है।
(5) इस पद्धति से उत्पन्न अण्डे और मांस में विशेष प्रकार की सुगन्ध और स्वाद होता है जिसके कारण इसकी कीमत बाजार में फार्म के अण्डों और मांस की अपेक्षा काफी ज्यादा मिलती है।
(6) घर में अण्डे और मांस की उपलब्धता के कारण इसे खाकर लोग प्रोटीन कुपोषण से बचते हैं।
(7) अण्डे और मांस आमदनी के छोटे परन्तु नियमित स्रोत है।
(8) घर में उपलब्ध अण्डे और मांस मेहमानों की खातिरदारी में चार-चाँद लगाते हैं।
(9) मुर्गे उपहार स्वरूप भी दिये जाते हैं।
(10) इसकी पालन व्यवस्था मुख्यतः घर की महिलाओं के द्वारा घर के अन्य कार्यों के साथ-साथ की जाती है लेकिन घर के सभी सदस्य इसमें अपना योगदान देते हैं।

देशी मुर्गीपालन की वर्तमान स्थिति

इस पद्धति के मुर्गी पालन से इतना लाभ होते हुए भी पीछे के चार दशकों में इसमें काफी कमी आयी है। इसका मुख्य कारण आज का बदलता हुआ परिवेष है। जनसंख्या की दिन दूनी रात चैगुनी वृद्धि घर के पिछवाड़े और आंगन को सीमित करती जा रही है। गली-कूचों तथा आंगन का पक्कीकरण, कीटनाषक तथा रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग तथा बहुफसलीय उत्पादन पद्धति से कीड़े-मकोड़े तथा फसलों के गिरे दानों की उपलब्धता दिनों दिन घटती जा रही है। घूमने-फिरने के लिये आवश्यक खाली स्थान तथा प्राकृतिक खाद्य स्रोतों में निरन्तर कमी के कारण परम्परागत ढंग से देशी मुर्गीपालन में अनेकों कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है। देशी मुर्गी वर्ष में **50** से **60** अण्डे देती है तथा **1500** ग्राम वजन प्राप्त करनें के लिये **20** से **25** सप्ताह का लम्बा समय लगता है। अतः आज के बदलते हुए परिवेश में कम उत्पादन क्षमता वाली देशी नस्ल की मुर्गी पालन आर्थिक दृष्टिकोण से लाभप्रद नहीं रह गया है।

उत्पादन क्षमता बढ़ाने के लिये आवश्यक सुधार

मुर्गीपालकों में तकनीकी ज्ञान का अभाव, ग्रामीण क्षेत्रों के लिये उपयुक्त उन्नत नस्ल की मुर्गियों की कमी, संतुलित सम्पूरक आहार का अभाव तथा मुर्गी महामारी जैसी मुख्य समस्यायें देशी मुर्गीपालन के मुख्य बाधक हैं। जिसका निराकरण कर देशी मुर्गी की उत्पादकता को **3** से **4** गुणा तक नाममात्र लागत से बढ़ाया जा सकता है।

तकनीकी ज्ञान

प्रायः ऐसा देखा जाता है कि एक बार मुर्गी का जोड़ा खरीद लेने के बाद लोग दे शी मुर्गियों से सालों भर बच्चे निकलवाते रहते हैं जिससे मुर्गियों में कुड़क होने की आदत पड़ जाती है। मुर्गी प्रायः 12 से 15 अण्डे देकर उसको सेने तथा बच्चों को पालनें के लिये कुड़क हो जाती है। यह क्रम साल में 3 से 4 बार हो पाता है जिससे उत्पादन क्षमता 45 से 60 अण्डे हो पाती है। अतः यह आवश्यक है कि मुर्गी द्वारा दिये गये अण्डों को प्रतिदिन हटा दिया जाये। जब मुर्गी अण्डे नहीं देखेगी तो कुड़क होने की आदत कम हो जायेगी और उत्पादन में वृद्धि होगी। घर में चूजे निकालना देशी मुर्गियों में कम उत्पादन क्षमता का सबसे बड़ा कारण है। घर में निकाले गये चूजों में इन-ब्रीडिंग का दुष्प्रभाव भी होता है जिसके कारण अण्डे की संख्या , निषेचन तथा प्रस्फुटन में भारी कमी तथा चूजों की मृत्युदर में वृद्धि होती है। अतः यह आवश्यक है कि हर वर्ष नये संकर चूजे किसी अच्छी हैचरी से लिये जायें। अगर घर में चूजे

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

निकलवाना जरूरी हो तो पड़ोसी गाँव से मुर्गा बदलते रहना चाहिए और हर बार नये आदमी से मुर्गा बदलना चाहिए।

उन्नत देशी नस्लें

आधुनिक मुर्गी पालन के जनक भारतवर्ष में परम्परागत देशी मुर्गी का पालन आदिकाल से होता आ रहा है। जिसमें प्रायः अवर्णित दे शी मुर्गियों का उपयोग होता है जिनकी उत्पादन क्षमता तथा बढ़ोतरी दर उन्नत नस्ल की विदेशी मुर्गियों की अपेक्षा काफी कम है। दे शी नस्ल की मुर्गियों में उत्पादकता की कमी के अलावा अनेकों अन्य विशेषताये हैं जिनके कारण ये ग्रामीण क्षेत्रों के लिए विदे शी नस्लों की अपेक्षा उपयुक्त और लोकप्रिय हैं। यहाँ के वातावरण में सदियों से पलती रहने के कारण इसमें रोग प्रतिरोधक क्षमता ज्यादा है तथा आर्द्र-उष्मीय प्रकोप को सहने में सक्षम है। इसमें घूम-फिर कर अपना भोजन जुटाने की असीम क्षमता होती है , निम्नकोटि के आहार पर जीवन यापन कर सकती है , हल्के तथा फुर्तीले होने के कारण शिकारियों से अपनी रक्षा करने और वंषक्रम चलाने में सक्षम होती है। विगत चार द शकों में परम्परागत मुर्गीपालन की लोकप्रियता में काफी गिरावट आयी है जिनके कई कारणों में सबसे महत्वपूर्ण उच्च उत्पादकता वाले दे शी मुर्गी की प्रजातियों का अभाव है। ग्रामीण मुर्गीपालन के लिए विकसित नई किस्म की सभी प्रजातियाँ (वनराजा ,क्राइलर,कैरी देवेन्द्र, कृष्णा-जे, कृष्णा प्रिया, ग्राम प्रिया तथा कैरी गोल्ड इत्यादि) विदे शी नस्ल की दो रंगीन प्रजातियों/स्टेन/लाइन के संकरण से बनाया गया है जो ग्रामीण वातावरण के लिए उपयुक्त नहीं है। वैज्ञानिकों का यह सोचना गलत है कि गरीब और अनपढ़ किसान इस बात से वाकिफ नहीं हैं कि व्यवसायिक मांस और अण्डे की विकसित नस्लें दे शी मुर्गियों की अपेक्षा कई गुना ज्यादा उत्पादन क्षमता वाली होती हैं और अगर ग्रामीण परिवेश में भी उसके रख-रखाव और खान-पान पर पूरा ध्यान दिया जाये तो ग्रामीण मुर्गियों की अपेक्षा कई गुना उत्पादकता पा सकते हैं। लेकिन ग्रामीण पारिवारिक मुर्गीपालकों के लिए ऐसा कर पाना संभव नहीं है। उत्पादकता और आत्मरक्षा के बीच ऋणात्मक सह संबंध से ग्रामीण भली-भांति परिचित हैं। अधिक मांस और अण्डे की उत्पादकता के परोक्ष अवांछित दुष्प्रभाव जैसे मातृत्व गुण में कमी, शिकारी से आत्मरक्षा में शिथिलता तथा अपेक्षाकृत अधिक शरीर भार तथा छोटे टांग के कारण तेज भागकर अपने शिकारी से बचाव की क्षमता में कमी के कारण ये प्रजातियाँ किसानों को स्वीकार्य नहीं हैं। केवल रंगीन पंखों वाली विदे शी मूल की प्रजातियों के संकर दे शी मुर्गी के उचित विकल्प नहीं हो सकते हैं बल्कि इसके लिए ग्रामीण परिवेश के उपयुक्त गुणों वाले विशेष प्रकार की प्रजातियों के विकास की जरूरत है। ग्रामीण परिवेश के लिए उपयुक्त मुर्गियों के लिए आवश्यक कुछ गुणों का वर्णन है जो निम्नलिखित है-

1. **मुर्गी का रंगः** पक्षी का रंगीन होना आवश्यक है क्योंकि इस प्रकार के पक्षियों की लोकप्रियता के साथ रंगीन पंख शिकारियों से बचाव में सहायक होते हैं तथा इनमें रोग निरोधक क्षमता भी अधिक होती है।

2. **स्वरूप तथा स्वभावः** खुले क्षेत्रों में पलने के कारण इन मुर्गियों को शिकारियों (कुत्ते और बिल्ली) का डर हमे शा बना रहता है जिससे बचाव के लिए मुर्गी का कम वजनी, लम्बी टांगे, मजबूत पूर्ण विकसित पंख तथा खूंखार लड़ाकू स्वभाव का होना आवश्यक है।

3. **उत्पादकताः** मध्यम दर्जे की मांस और अण्डे उत्पादन की क्षमता वाली मुर्गी उपयुक्त है क्योंकि ग्रामीण वातावरण में खाने के प्राकृतिक स्रोतों का अभाव होता है जिसे जुटाने के लिए जी तोड़ परिश्रम की आवश्यकता होती है।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

4. **रोगनिरोधक क्षमताः** चूँकि पक्षियों को खुले वातावरण में घूम-फिर कर अपना चारा जुटाना होता है तथा गंदी नालियों इत्यादि से कीड़े-मकोड़े खाने पड़ते हैं अतः इसमें रोगनिरोधक क्षमता का होना अति आवश्यक है।

5. **ग्रीष्म-उष्मीय सहिष्णुताः** ग्रीष्म-उष्मीय वातावरण के दुष्प्रभाव से बचने के लिए प्राकृतिक जन्य ग्रीष्म-उष्मीय प्रमुख जीन्स का उपयोग लाभप्रद होगा।

6. **स्वजननीय क्षमताः** पिछड़े इलाके में हर वर्ष विकसित नस्ल के चूजों की उपलब्धता सुनिश्चितत कराना कठिन कार्य है अतः यह आवश्यक है कि विकसित प्रजाति में स्वजननीय क्षमता हो।

उन्नत देशी नस्ल की प्रजातियाँ या देशी और विदेशी नस्ल की संकरवर्ण प्रजातियों में ही उपरोक्त सारे गुण संभव हो सकते हैं। अच्छे उत्पादन के लिये यह आवश्यक है कि कम उत्पादकता वाले देशी मुर्गी की जगह उन्नत देशी नस्लें पाली जायें। कैरी निर्भीक , कैरी शयामा, उपकारी और हितकारी नामक चार प्रकार की उन्नत नस्लें देशी मुर्गी की चार प्रजातियों का उपयोग करके बनाया गया है। चारों प्रजातियों में देशी मुर्गी के सारे गुणों के साथ-साथ वार्षिक अण्डा उत्पादन क्षमता 160 से 200 अण्डे, अण्डे का औसत वजन 52 से 60 ग्राम तथा अण्डे का रंग गहरे भूरे रंग का है।

संतुलित पूरक आहार

मुर्गियों की उन्नत नस्ल होने के कारण इसके आहार पर भी ध्यान देना होगा। मुर्गी आहार के प्राकृतिक स्रोत में दिनानुदिन कमी आ रही है अतः संतुलित आहार उपलब्ध कराना आज अति आवश्यक हो गया है। साधारणतः गाँवों में लोग वर्ष के खास मौसम में उपजने वाले एक ही अनाज को मुर्गियों को खाने के लिये देते हैं। एक प्रकार के अनाज से आहार संतुलित नहीं हो पाता। अतः आवश्यक है कि सालभर उपजने वाले तरह-तरह के अनाजों का मिश्रण मुर्गियों को खिलाया जाये। अगर सम्भव हो तो बाजार में बिकने वाला लवण मिश्रण भी मुर्गियों को दाने में साथ दिया जाये। यह आहार प्रति मुर्गी करीब 30-40 ग्राम की दर से शाम के समय दिया जाना चाहिये। आहार की मात्रा को मौसम और प्राकृतिक साधनों से उपलब्ध आहार की मात्रा के हिसाब से घटाया या बढ़ाया जा सकता है। केंचुए की खेती कर कुछ केुचुए प्रतिदिन मुर्गियों को खिलाये जा सकते हैं जो प्रोटीन का एक बहुत अच्छा स्रोत हैं।

रोगों से बचाव

रोगों से बचाव के लिये यह आवश्यक है कि उचित समय पर विभिन्न रोगों के टीके लगवाये जायें। आजकल हर ब्लाक में टीके की सुविधा उपलब्ध है। टीकाकरण करवाने के लिये यह आवश्यक है कि मुर्गीपालक एक साथ बड़ी संख्या में चूजे निकलवायें या किसी अच्छे स्रोत से खरीदें। टीका एक दिन से एक सप्ताह की उम्र के चूजों को एक साथ दिया जा सकता है। अतः यह आवश्यक है कि मुर्गी को अण्डों पर तीन-चार गाँवों के मुर्गीपालक विचार कर एक सप्ताह के अन्दर ही बैठायें जिससे समूह में चूजे निकलने पर टीकाकरण आसान और सम्भव हो पायेगा। चूजे वर्ष में एक या दो बार ही निकाले जायें। मुर्गियों के रात्रि विश्राम तथा शत्रुओं से सुरक्षा के लिये बनाये गये दरबे साफ-सुथरे तथा हवादार हों। अगर सम्भव हो तो दरबे में तीन इंच मोटी धान की भूसी के विछावन की व्यवस्था करें जो दरबे की प्रतिदिन की सफाई से मुक्ति दिलायेगा। पीने के लिये चैबीसों घंटे स्वच्छ पानी की व्यवस्था करें।

उपरोक्त सुधारों के साथ देशी मुर्गीपालन से उत्पादन क्षमता में काफी बढ़ोत्तरी की जा सकती है और छोटे-छोटे मुर्गीपालक खुशहाल हो सकते हैं।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

एवियन इनफ्लुएंजा अर्थात बर्ड फ्लू के कारण एवं बचाव

डा. डॉ संजय कुमार मिश्र[1] एवं डॉ. पारुल[2]

1 पशु चिकित्सा अधिकारी पशुपालन विभाग मथुरा उत्तर प्रदेश

2, सहायक आचार्य, वेटनरी पब्लिक हेल्थ, दुवासु मथुरा उत्तर प्रदेश

बर्ड फ्लू पालतू एवं जंगली पक्षियों की एक *अति संक्रामक*बीमारी है , जिसमें बिना किसी लक्षण से लेकर बहुत उच्च मृत्यु दर जैसी प्रक्रियाओं की पूरी तस्वीर देखने को मिल सकती है। इस बीमारी की ऊष्मायन अवधि भी अत्याधिक अस्थिर रहती है जोकि कुछ दिनों से 1 सप्ताह तक हो सकती है।

कारण

बर्ड फ्लू संक्रमण, एवियन इनफ्लुएंजा विषाणु के कारण होता है । सामान्यता इसके तीन प्रकार होते हैं ए, बी एवं सी। पक्षियों में केवल "ए" प्रकार पाया गया है। A प्रकार मनुष्य, सूअर, घोड़ा एवं अन्य स्तनधारी पशुओं में भी पाया जाता है। "बी" एवं "सी" प्रकार केवल मनुष्यों में पाया जाता है। एवियन इनफ्लुएंजा के 15 विभिन्न उप प्रकार होते हैं। कुछ उप प्रकार बंदी पक्षी जैसे तोता , कोयल और फिंच में पाए गए हैं और इन पक्षियों में संक्रमण का महत्व अभी तक स्पष्ट नहीं हो पाया है। यह विषाणु नेवले , बिल्ली, चूहे, शुतुरमुर्ग एवं चूहे की अन्य प्रजातियों में भी बन सकता है। बर्ड फ्लू का संक्रमण मुख्य रूप से पक्षियों को प्रभावित करता है परंतु कई मामलों में यह मनुष्य को भी संक्रमित कर सकता है । एवियन इनफ्लुएंजा को दो नस्लों में बांटा गया है.

1. *एलपीएआई/लो पथोजेनिक एवियन इनफ्लुएंजा* कम या कोई बीमारी के लक्षण नहीं दिखाई देते हैं।

2. *एच पी ए आई/ हाईली पथोजेनिक एवियन इनफ्लुएंजा* इसमें उग्र नएदनिक लक्षण एवं उच्च मृत्यु दर देखने को मिलती है।

बर्ड फ्लू के लक्षण:

H5N1 के संक्रमण के मामले में मतली और उल्टी जैसे लक्षण शामिल है। अन्य सामान्य लक्षणों में खांसी बुखार सिर दर्द दस्त सांस लेने में कठिनाई, नाक बहना, गले में खराश, मांसपेशियों में दर्द हो सकता है।

रोग का फैलाव:

यह विषाणु मुख्य रूप से मल के माध्यम से संक्रमित दाना एवं पानी से फैलता है। संक्रमित पक्षी लार, नाक के स्राव और मल में फ्लू के विषाणु विसर्जित करते हैं तथा इनके संपर्क से रोग फैल सकता है। अतिसंवेदनशील पक्षी जब दूषित उत्सर्जन या संक्रमित सतहो के साथ संपर्क में आते हैं तो वह भी

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

संक्रमित हो जाते हैं। यह बीमारी मनुष्य पशुओं उपकरण वाहनों की आवाजाही पड़ोसी झुंड के साथ संपर्क कीड़े, चूहे, आवारा पशुओं और पालतू पशुओं के साथ संपर्क दूषित पानी यह पर्याप्त सफाई ना होने इत्यादि कारणों से भी हो सकती है। एवियन इनफ्लुएंजा विषाणु आमतौर पर इंसानों को संक्रमित नहीं करता है।

विषाणु का प्रभाव:

एवियन इनफ्लुएंजा का विषाणु स्वाभाविक रूप से पक्षियों में होता है। विश्व भर के जंगली पक्षियों की आंतों में यह विषाणु पाया जाता है। किंतु आमतौर पर उनमें बीमारी नहीं मिलती है। लेकिन बर्ड फ्लू मुर्गी बत्तख टर्की और कुछ पालतू पक्षियों में बहुत संक्रामक है तथा उन्हें बहुत बीमार कर देता है जिससे उनकी मृत्यु हो सकती है।

भारत में बर्ड फ्लू की स्थिति

भारत में एचपी एआई का पहला प्रकोप नवपुर महाराष्ट्र में 2006 में देखा गया था। अंतिम प्रकोप की सूचना अगस्त 2013 मैं छत्तीसगढ़ से मिली थी। वर्तमान स्थिति में 11 नवंबर 2013 से देश रोगमुक्त है। देश भर में भारत सरकार पशुपालन विभाग के द्वारा निगरानी की जा रही है। भारत में मनुष्यों में अभी तक कोई मामला सामने नहीं आया है।

पक्षियों में नैदानिक लक्षण

ब्रायलर में रोग के लक्षण अक्सर कम स्पष्ट होने के साथ गंभीर अवसाद भूख की कमी तथा आम तौर पर मृत्यु दर में उल्लेखनीय वृद्धि 90 से 100% हो सकती है। 24 से 48 घंटे के अंदर मृत्यु चेहरे और गर्दन की सूजन तथा गति भंग जैसे न्यूरोलॉजिकल लक्षण भी देखे जा सकते हैं। कलगी और झालर में सूजन,आंखों के लक्षण अधिक पानी का सेवन पहले सफेद फिर हरे दस्त आंखों के आसपास सूजन आंखों और नाक से पानी का प्रवाह भी अक्सर देखा जाता है। युवा पक्षी न्यूरोलॉजिकल लक्षण प्रदर्शित कर सकते हैं।

उपचार

इस बीमारी का कोई उपचार नहीं है ।

जैव सुरक्षा के सिद्धांत

संक्रमित स्थान में संक्रमित पशुओं और दूषित सामग्री के प्रवेश को सीमित करने के लिए बाधाओं का निर्माण और रखरखाव। इस प्रक्रिया को ठीक से लागू करने से ज्यादातर संक्रमण को रोका जा सकता है।

परिसर में प्रवेश करने या छोड़ने वाले वाहन व एवं उपकरणों को अच्छी तरह से साफ किया जाना चाहिए। इससे सामग्री को दूषित कर रहे अधिकांश विषाणु निकल जाएंगे।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

पशुओं में शारीरिक स्थिति स्कोरिंग

ममता, रजनीश सिरोही, दीप नारायण सिंह, अजय कुमार एवं यजुवेंद्र सिंह

पशुधन उत्पादन प्रबन्धन विभाग, दुवासू, मथुरा

गायों में शरीर की ऊर्जा भण्डार का आकलन करने के लिए बीसीएस प्रणाली का उपयोग किया जाता है। शारीरिक स्थिति स्कोरिंग या बॉडी कंडीशन स्कोरिंग एक संख्यात्मक पैमाना है जिसका उपयोग शरीर पर वसा की मात्रा का मूल्यांकन करने के लिए किया जाता है। गाय कितनी पतली या मोटी है, इसका आकलन मुख्यतः १-५ के पैमाने पर किया जाता है। जहाँ स्कोर १ बेहद पतली स्थिति को दिखता है वहीँ स्कोर ५ अत्यधिक मोटी स्तिथि को दर्शाता है। ऊर्जा का एक मुख्य स्रोत है चयापचय के लिए उपलब्ध वसा , शरीर के कुछ हिस्सों में (कन्धों , हुक और पिन हड्डियां , पूंछ के इर्द गिर्द, पीठ की हड्डी आदि) परिलक्षित होने वाला वसा भण्डार स्कोरिंग का एक आधार होता है।

बॉडी स्कोर -१

इसमें पशु बेहद पतला होता है। सभी कंकाल संरचनाएं स्पष्ट दिखाई देती हैं। पूंछ के इर्द गिर्द वसा प्रतीत नहीं होती। ऐसे पशु रोगग्रस्त हो सकते हैं और किसी भी प्रकार का तनाव उनके जीवन के लिए कठोर हो सकता है।

बॉडी स्कोर -२

इस स्कोर में पशु पतला होता है। पूंछ के इर्द गिर्द कूल्हे की हड्डियों और फ्लेंक के आस पास ऊतक कवर कुछ स्पष्ट तो होता है किन्तु प्रचुर नहीं होता है।

बॉडी स्कोर - 3

इस स्कोर में पशु के थोरैक्स की हड्डियां हलकी दिखाई पड़ती हैं। हुक और पिन हड्डियां भी हल्की दिखाई पड़ती हैं। इसमें पूंछ के इर्द गिर्द वसा प्रतीत होती है। ब्याने के समय के लिए यह स्कोर आदर्श माना जाता है।

बॉडी स्कोर -४

इस स्कोर में कंकाल की संरचना की पहचान करना कठिन होता है। इसमें कंधे और पूंछ के इर्द गिर्द वसा स्पष्ट रूप से प्रतीत होती है। पसलियों और जाँघों के ऊपर चर्बी की सलवटें बनने लगती हैं।

बॉडी स्कोर -५

इस स्कोर में पशु काफी मोटा दिखाई देता है। पूंछ के सिरे और कूल्हे की हड्डियां पूरी तरह से वसा की तहों में दबी हुई प्रतीत होती हैं। पीठ सपाट और पूरी तरह से वसा से ढकी हुई प्रतीत होती हैं।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

पशुओं की शारीरिक स्थिति सीधे तौर पर उनकी उत्पादकता, स्वास्थ और कुल आयु को प्रभावित करती है। शारीरिक भार के अतिरिक्त पशुओं का पतलापन या मोटापन उनमे अन्तर्निहित पोषण सम्बन्धी कमियों , स्वास्थ समबंशी समस्याओं और अनुपयुक्त प्रबंधन का संकेतक होता है। यदि नियमित रूप से किया जाए तो शारीरिक स्कोरिंग इन समस्याओं का निवारण करने और उत्पादकता में सुधार करने का माध्यम हो सकती है।

मोटापा चयापचय सम्बन्धी समस्याओं का कारण हो सकता है , ऐसा पशु संक्रमणों के प्रति अधिक संवेदनशील होता है साथ ही उसे ब्याने जे समय और बाद में कठिनाई होने के सम्भावना भी अधिक होती है। इस प्रकार ओवरकंडीशनिंग या मोटापा अनुचित पोषण या प्रजनन प्रबंधन का संकेतक होता है। ओवरकंडीशनिंग आमतौर पर पशु के दुग्धःकाल के आखिरी तीन से चार महीनो में शुरू होती है जब दुग्ध उत्पादन में तो कमी आती है किन्तु पशु की आहार व्यवस्था में कुल पोषक तत्वों का स्तर तदनुसार कम नहीं किया जाता। लम्बी शुष्क अवधि प्रदान करना भी ओवरकंडीशनिंग का कारण हो सकता है।

अपर्याप्त ऊर्जा और उत्पादन को बनाए रखने के लिए प्रोटीन के भंडार के कारण अंडरकंडीशनिंग , या पतलापन, अक्सर उत्पादन और दूध वसा के स्तर को कम कर सकता है। पतली गायें अक्सर तब तक गर्मी या गर्भ धारण नहीं करती हैं जब तक कि वे उचित स्कोर में नहीं आ जाती । इन जानवरों को खिलाने में, शरीर के भंडार में वृद्धि करते हुए उत्पादन बनाए रखने के लिए देखभाल की जानी चाहिए।

औसर बछियों के आहार प्रबंधन में यह काफी महत्वपूर्ण होता है। यदि वे युवावस्था में अधिक स्कोरिंग की हो तो उन्हें ब्याने सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है। पशु की प्रजनन क्षमता में ऊर्जा संतुलन बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यदि पशु का ब्रीडिंग के समय काम स्कोर है तो निश्चित ही यह उसकी गर्भावस्था की दर को काम करेगा।

ब्याने से कुछ दिन पूर्व और बाद तक का समय ट्रांजीशन पीरियड कहा जाता है। इस दौरान गाय अक्सर नकारात्म ऊर्जा की स्थिति में रहती है। ब्याने से पूर्व ओवरकंडीशनिंग वाली गायों में ब्याने के बाद चारे का काम सेवन करने की समस्या हो सकती है। इससे शारीरिक स्थिति का नुकसान होता ही है और नकारात्मक ऊर्जा का अंतर्र और अधिक गहरा हो सकता है। ड्राई मैटर के सेवन की कमी के कारण दूध उत्पादन पर स्पष्ट प्रभाव पड़ता है और यह केटोसिस या विस्थापित अबोमसम जैसी पोषण सम्बन्धी समस्या के रूप में परिणत हो सकता है।

किसी पशु के स्वास्थ्य की स्थिति का आकलन करने में शारीरिक स्कोरिंग बहुत महत्वपूर्ण है । काम स्कोर जहाँ संभावित बीमारियों या अनुचित पोषण का संकेत दे सकता है वहीँ एक उच्च स्कोर प्रजनन और चयापचय सम्बंदि समस्याओं की अधिक सम्भावना का संकेतक हो सकता है ।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

ओसर पशुओं का रख-रखाव एवं प्रबन्धन

अजय कुमार, ममता, दीप नारायण सिंह, रजनीश सिरोही एवं यजुवेन्द्र सिंह

पशुधन उत्पादन प्रबन्धन विभाग, दुवासू, मथुरा

मादा पशु जब एक साल की उम्र के हो जाते है तब उनके प्रथम ब्यांत तक उन्हें ओसर कहा जाता है। सामान्यतः यह देखा गया है कि बछडे-बछडियो की देखभाल व आहार प्रबन्धन पर आमतौर पर विशेष ध्यान नही दिया जाता है। परन्तु , यदि हमें उत्तम पशु प्राप्त करना है तो उसकी तैयारी इसी अवस्था से ही करनी होगी। जैसाकि कहा गया है- ''आज की बछड़ी कल की गाय'' है । डेरी व्यवसाय में परिवर्तित वंश की व्यवस्था दो प्रकार से की जा सकती है। ओसर का क्रय करके अथवा अपने ही कार्य की बछियों का इस अवस्था तक विकास करके। इस दूसरी विधि में ओसर क्रय की अपेक्षा पशु आहार और श्रमशक्ति में अधिक लागत लगती है किन्तु स्वंय विकसित किए हुए बछडे-बछडियो उच्च गुणवत्ता के होते है और साथ ही इस विधि द्वारा किसी बाहरी संक्रमण के झुण्ड में प्रवेश करने की सम्भावनाऐं भी खत्म हो जाती है। किन्तु तात्कालिक लाभ न मिलने के कारण यह पक्ष कुछ उपेक्षित रह जाता है जिसके कारण बछडों में मृत्युदर भी अधिक पायी जाती है।

ओसर प्रबन्धन का लक्ष्य

1.**शरीर का वजन-** ओसर की यौन परिपक्कता आयु के बजाय शरीर के वजन से अधिक सम्बन्धित होती है।

परिपक्क शरीर के वजन का - 40-50:, यौवन, पहली गर्मी

परिपक्क शरीर के वजन का - 50-60:, परिपक्कता, प्रजनन का समय

परिपक्क शरीर के वजन का - 80-85:, पहली बार व्याने का समय

2.**शरीर का वजन बढ़ना-** देशी पशु के भार में वृद्धि 600 ग्राम प्रति दिन होनी चाहिए जिससे पशु जल्दी प्रजनन परिपक्कता मे आ जाता है जबकि विदेशी नस्लों के लिए प्रतिदिन भार में वृद्धि 800-900 ग्राम होनी चाहिए।

3.**प्रजनन आयु-** समय से पहले प्रजनन से ओसर की उचित वृद्धि और विकास बाधित होगा जिससे उसकी जीवन भर की उत्पादकता कम हो जायेगी । 15-18 महीने की आयु के बीच ओसर पशु यौन परिपक्कता में आ जाते है यह बछिया के उत्पादक जीवन को बढायेगा और प्रत्येक वर्ष उत्पादित बछड़ों व बछिया की संख्या में वृद्धि करेगा।

4.**पहली बार ब्याने की आयु-** जब बछिया 15-18 महीने के बीच गर्भधारण करती है और 280 दिनों की गर्भधारण अवधि समाप्त होने के बाद नवजात वत्स को जन्म देती है। इसलिए आदर्श व्यात की आयु 25-28 महीने के बीच होनी चाहिए।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

पहली बार ब्याने का वजन-जब देशी बछिया नवजात बच्चे को जन्म देती है तो उसका वजन 400 से 450 किलोग्राम और विदेशी नस्लों के लिए 550 से 600 किलोग्राम या उसके शरीर के वजन का लगभग 85 प्रतिशत होना चाहिए।

6.**प्रतिस्थापन वंश-** अधिकांश डेयरी फार्मों में 20-25 प्रतिशत गायों को हर साल नये ब्याई गायों से परिवर्तित कर दिया जाता है। ताकि डेयरीफार्म की अर्थव्यवस्था प्रभावित न हो और अधिक दुग्ध उत्पादन क्षमता वाले पशु झुण्ड में बने रहे।

शारीरिक स्थिति स्कोर- बहुत मोटे या दुबले बछिया प्रजनन के उद्देश्ष्य से उपयोग नही किये जाने चाहिए। एक वर्ष की आयु से प्रजनन आयु तक एक बछिया का शारीरिक स्थिति स्कोर 2.50 होना चाहिए और प्रजनन से लेकर ब्याने तक 3.25 से 3.50 होना चाहिए।

ओसर के उचित प्रबन्धन हेतु निम्न बातों पर ध्यान देना अतिआवश्यक है।

- बछियों को प्रथम बार मद में आने की अवस्था तक बाकी नर जानवरों से अलग रखना चाहिए।
- बछियों के भरण-पोषण पर उचित ध्यान देना आवश्यक है , जिससे उसकी शारीरिक वृद्धि सही तरीके से हो सके और वह सही समय पर मद में आना प्रारम्भ करें तथा भविष्य में उसका प्रजनन चक्र सामान्य बना रहे।
- उचित भरण-पोषण होने पर ओसर 12-18 महीने के बीच मद में आना शुरू कर देती है।
- गर्भाधान हेतु उपयुक्त होने पर मदकाल प्रारम्भ होने के लगभग 12 घण्टे के बाद लेकिन 16 घण्टे से पूर्व कृत्रिम गर्भाधान या उचित प्रजाति के सांड द्वारा गर्भित कराना चाहिए।
- गर्भाधान कराने के 2-3 माह के बाद गर्भ परीक्षण अवश्य करायें। ऐसा देखा गया है कभी-कभी 45-60 दिन वाले कुछ पशु मद के लक्षण प्रदर्षित करते है। अतः किसी भी पशु का गर्भाधान बिना जाँच कराये कभी नहीं करना चाहिए।
- गर्मी के मौसम में विशेष ध्यान रखना चाहिए , जैसे दिन में 2-3 बार ताजा स्वच्छ ठंडा पानी पिलाना चाहिए और अगर हो सके तो प्रतिदिन नहलाना चाहिए।
- बछियों का आवास ऐसा होना चाहिए जिससे वह सुविधा पूर्वक रखी जा सके और जिसमें चारा खिलाने, जल निकासी तथा साफ-सफाई आदि सुगमता पूर्वक की जा सके।
- रिकार्ड रखना-गौशाला के हर कार्य का उचित रिकार्ड रखना चाहिए। पशुपालन के आय व व्यय के रिकार्ड से इस व्यवसाय में होने वाली लाभ/हानि के बारे में पता चल जाता है। गौषाला पर होने वाले विभिन्न गतिविधियों का रिकार्ड , नवजात बच्चों की जन्म तिथि , शारीरिक भार में वृद्धि, प्रजनन की तिथि, टीकाकरण, डीवर्मिंग आदि का उचित रिकार्ड रखना चाहिए।
- पहचान-बछिया को स्थायी अथवा अस्थायी प्रकार से निशान लगाये जाते है बछिया का पूरा रिकार्ड रखने के लिए उनकी पहचान जरूरी है। इसलिए बछिया में पहचान के लिए ईयरटैग या ब्राडिंग से की जा सकती है।

टीकाकरण-संक्रामक रोगों की रोकथाम के लिए टीकाकरण सर्वाधिक प्रभावी एवं सबसे सस्ती विधि माना जाता है। मुहपका एवं खुरपका , ब्रूसिलोसिस गोजातीय वाइरल डायरिया जैसी विभिन्न बीमारियों के लिए ओसर पशु में टीकाकरण करवाना चाहिए।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

परिजीवियों का नियत्रंण-हर 3 महीने में सभी बछियों को आंतरिक परिजीवियों के प्रतिकूल डीवर्म करें। बाह्य परजीवियों से बचने के लिए ग्रुमिंग किया जाना चाहिए।

इस प्रकार यदि उपरोक्त छोटी-छोटी किन्तु महत्वपूर्ण बातों को ध्यान देकर पशुपालक अपने पशु के प्रति पूर्ण जिम्मेदारी निभा सकेगें जिसके परिणाम स्वरुप उन्हें अच्छे प्रजनन शील तथा उत्पादक पशु मिलेगें और अगली पीढी की स्वस्थ सन्तति जो अधिक दुग्ध उत्पादन तथा लाभ के अतिरिक्त पशु पालक डेरी व्यवसाय, समाज तथा देश को लाभ पहुंचायेगी।

पशुपालक मित्र
पशुपालन को समर्पित त्रिमासिक पत्रिका ISSN: 2583-0511(Online)

लेख भेजने के लिए निर्देश :

- लेख हिन्दी में मंगल फॉन्ट एवं microsoft word में होने चाहिये ।
- लेख पशुपालन से संबन्धित होना चाहिये।
- लेख में वैज्ञानिक या तकनीक शब्दों का कम से कम प्रयोग होना चाहिए ।
- लेख की भाषा ऐसी होनी चाहिए कि पशुपालक को समझने में परेशानी न हो ।
- लेख के प्रकाशन का निर्णय संपादक का होगा।
- लेख का प्रकाशन निः शुल्क होगा ।
- लेख को प्रकाशन के लिए ईमेल आई डी pashupalakmitra1@gmail.com पर भेजना होगा।
- लेखक को निम्न प्रारूप में एक स्वहस्ताक्षरित प्रमाण पत्र लेख के साथ सलग्न करना होगा प्रमाणित किया जाता है कि संलग्न लेख...शीर्षक..... लेखक ...लेखक का नाम ..... द्वारा लिखित एक मौलिक, अप्रकाशित रचना है, तथा इसे प्रकाशन के लिए किसी अन्य पत्रिका में नही भेजा गया है।
- लेख में वर्णित सूचनाओं का दायित्व लेखक का होगा , संपादक का नही ।